नाट्यशास्त्र

NatyaShastra

ग्रंथ का रचनाकाल

- पश्चिम तथा भारतीय विद्वानों में से अधिकांश ने नाट्यशास्त्र का समय 200 ई. पूर्व से 407 ई. तक के बीच माना है। कुछ विद्वानों ने इस बात पर जोर दिया है कि यूनानी नाट्य के विकास के बाद ही **भरत** के नाट्य का विकास हुआ अतः यह स्पष्ट होता है कि नाट्यशास्त्र 200 ई. पूर्व प्राचीन नहीं हो सकता। इसमें बौद्ध या जैन संप्रदाय के बारे में कोई उल्लेख नहीं होता अतः स्पष्ट है कि नाट्यशास्त्र बुद्ध काल अथवा 500 ई. पूर्व की रचना हो।

नाट्यशास्त्र एक पारंपरिक रचना

- अलग-अलग स्थानों पर नाट्यशास्त्र में किसी एक विशेष विषय को समझाते हुए उसी विषय से संबंधित श्लोक दिए गए हैं। इसमें अनुवश्य श्लोक भी प्राप्त हैं। अनुवश्य का अर्थ है जो वंश परंपरा द्वारा, गुरु शिष्य परंपरा द्वारा चला आया हो। अतः संभव है कि नाट्यशास्त्र के रचनाकार को परंपरा द्वारा कुछ ऐसी सामग्री श्लोकों के रूप में प्राप्त हुई होगी, जिसे नाट्य शास्त्र में जोड़ना सरल था।

भरत नाम

- कुछ विद्वानों की मान्यता है की **भरत** इस पौराणिक नाम का अर्थ है- एक्टर या अभिनेता। इसी कारण यह नाम नाट्यशास्त्र के शास्त्रकारों के साथ जुड़ा रहता था याज्ञवल्क्य स्मृति में **भरत** शब्द का प्रयोग नाट्य या एक्टर के लिए हुआ है

भरत नाम की सार्थकता के सिद्धांत

- नाट्यशास्त्र के टीकाकार अभिनवगुप्त ने अपने टीका अभिनव भारती में कहा है कि यह ग्रंथ एक व्यक्ति की रचना नहीं है। इस बात की संभावना है कि **भरत** नाम किसी आदि आचार्य के नाम से ही **भरत** नाम की परंपरा चली हो वह तभी से नटों या नटाचार्यों के नाम से यह नाम जुड़ गया होगा स्वयं नाट्यशास्त्र में नाटक के लिए भरत संज्ञा का प्रयोग मिलता है

पृष्ठे कृत्वास्य कुतयं नाट्यं
यतो मुखं भरतः

- उपरोक्त बातों से यह अनुमान होता है कि नट शब्द कलाबाजों, नट का तमाशा करने वाले, अभिनय करने वाले पात्रों दोनों के लिए प्रयोग होता है। अतः स्पष्ट है तभी से इन्हें नट की अपेक्षा **भरत** की सम्मानजनक पदवी से सुशोभित किया गया। अभिनव भारती में भी यह प्रश्न उठा था कि **भरत** एक ही व्यक्ति थे या नहीं। इससे स्पष्ट होता है कि आज से 1000 वर्ष पूर्व भी अभिनवगुप्त के समय में यही प्रश्न उठा था।

वर्णय विषय

- स्वयं नाम से स्पष्ट है कि यह एक नाटक का ग्रंथ है। संगीत नाटक का अभिन्न अंग होने के कारण इसमें संगीत की व्याख्या की गई है। **भरत** ने कहा है:-

न तत् ज्ञानम, न तत् शिल्पं

न सा विद्या, न सा कला

न सा योगो, न तत् कर्मो

नाट्यऽअस्मिन यन्न दृश्यते

- अर्थात कोई ज्ञान, कोई शिल्प, कोई विद्या, कोई कला, योग या कर्म ऐसा नहीं जिसकी व्याख्या इसमें ना की गई हो। इसमें सभी विषयों की न्यूनाधिक व्याख्या की गई है।

नाट्यशास्त्र संगीत के आधार ग्रंथ के रूप में

- इसके प्रथम अध्याय में कहा गया है ऋग्वेद से पाठ, सामवेद से गीत, यजुर्वेद से अभिनव व अर्थ वेद से रसग्रहण कर नाट्य वेद की रचना की गई है। इस महान ग्रंथ के 28 से 33 अध्याय तक का संगीत का प्रत्यक्ष संबंध है। 28 वां तथा 29 वां अध्याय बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें संगीत शास्त्र के मौलिक विषयों यथा स्वर, श्रुति, ग्राम, मूर्छना, 18 जातियों तथा उनके 10 लक्षण बताए हैं।
- 29 वें अध्याय में जातियों का रसानुकूल प्रयोग, विभिन्न प्रकार की वीणाएं तथा उनकी वादन विधि।
- 30 वें अध्याय में सुषिर वाद्यों का वर्णन है।
- 31 वें अध्याय में कला, लय, विनय विभिन्न प्रकार की ताल व उनके भेद
- 32 वें अध्याय में ध्रुवा के पांच भेद, उदाहरण व छंदविधि, पंचविधि, गायक-गायकों तथा वादकों के गुण।
- 33 वें अध्याय में अनवद्ध वाद्यों की उत्पत्ति, उनके अंग, भेद, वादन-विधि, 18 जातियां तथा वादकों के लक्षण बताए हैं।
- इसके छठे और सातवें अध्याय में रस, भाव व 19 वें अध्याय में का काकू, स्वर व्यंजन की व्याख्या की गई है।

स्वर-

सा, रे, गा, म, प, ध, नि इन 7 स्वरों को संगीत आधार माना है। इसके अतिरिक्त दो स्वर साधारण यानी विकृत के हैं।

(1) अंतर गांधार

(2) काकली निषाद

- सात स्वरों के अंतर्गत 22 श्रुतियां बताई हैं। स्वरों के चार प्रकार के आपसी संबंध वादी, संवादी, विवादी, अनुवादी बताए हैं। वादी- संवादी स्वरों में 13 व 9 श्रुतियों का संवादात्मक अंतर होना चाहिए। 2 या 20 श्रुतियों के अंतर पर विवादी स्वर कहे हैं व शेष अनुवादी कहे गए हैं।

सम्वाद भाव

- **भरत** की संगीत परंपरा में संगीत से सम्वाद संबंधों का अत्यंत महत्व है। मुख्य दो सम्वाद बताए हैं-

1. षड़ज पंचम सम्वाद स- प

2. ऋषभ पंचम सम्वाद रे- प

- इन्हीं दो सम्वाद संबंधों के आधार पर शब्द व मध्यम इन दोनों का मूलभूत अंतर बताया है। षड़ज ग्राम में षड़ज पंचम व मध्यमग्राम में षड़ज मध्यम भाव ही प्रधान है।

श्रुति निदर्शन

- 22 श्रुतियों की सिद्धि तथा ग्रामों का मूलभूत अंतर बताने के लिए श्रुति दर्शन विधान है। चतुःसारणा या सारणा चतुष्टयी द्वारा इसे स्पष्ट किया गया है। षड़ज ग्राम, पंचम व मध्यम ग्रामिक पंचम में एक श्रुति का अंतर है। जिसे प्रमाण श्रुति कहा गया है।

ग्राम

दो प्रकार के ग्राम बताए गए हैं-

नि़	सा	रे	गा	मा	पा	धा	नि
4	3	2	4	4	3	2	

- अर्थात स- प, रे- ध व ग - नि की जोड़ियों के बीच 13 श्रुतियों के अंतर से षड़ज पंचम भाव सम्वाद रखता है।

नि़	सा	रे	गा	मा	पा	धा	नि
4	3	2	4	4	3	2	

- रे- प की 9 श्रुतियां होने से स- प सम्वाद भंग हो गया। रे- प के फलस्वरूप मध्यमग्राम की रचना हुई। **भरत** ने कहा है कि षड़ज ग्राम में पंचम चतु श्रुतिक व धैवत त्रिश्रुतिक है। मध्यमग्राम में पंचम त्रिश्रुतिक व धैवत चतुश्रुतिक है

मूर्च्छनाएं

- मूर्च्छनाओं से विभिन्न सप्तक स्वरावलियों की प्राप्ति होती है। एक-एक ग्राम की 7-7 मूर्च्छनाएं व 7-7 शुद्ध, सान्तरा, सकाकली, साधारणीकृता कही है।

मूर्च्छना	शुद्ध स्वरों की	सान्तरा	एकाकली	साधरणीकृता	कुल
षड़ज ग्राम	7	7	7	7	28
मध्यम ग्राम	7	7	7	7	28
दोनों ग्रामों की					36

इस प्रकार ग्रामों के कुल (28+28) 56 मूर्च्छनाएं होती हैं

जातियां

- इसके अतिरिक्त 7 शुद्ध व 11 विकृत कुल 18 जातियां मानी है। व उनके 10 लक्षण बताए हैं। जो इस प्रकार हैं- ग्रह, अंश, मंद्र, तार, न्यास, अपन्यास, औढवत्व, षाड़वत्व, अल्पत्व, बहुत्व, अंश स्वर को प्रमुख माना है

शैलियां

- गायन वादन की शैलियों के आधार पर गीतियों की प्राप्ति होती है। चार प्रकार की गीतियां मानी हैं। (1) मार्गी (2) अर्ध मार्गी (3) संभाविता (4) पृथुला

वाद्य

- चार प्रकार के वाद्यों का वर्णन है। तत् वाद्य में वीणा, विपंची। अवनद्धय वाद्यों में मृदंग, पुष्कर। घन वाद्यों में लकड़ी व धातु से बने वाद्य, सुषिर वाद्य में वंशी व फूंक से बजने वाले वाद्य। वीणा के स्वतंत्र वादन के अतिरिक्त वीणा तथा विपंची का युगल वादन भी बताया है। तीन प्रकार के मृदंगों की चर्चा की है (1) हरीतकी (2) यवाकृति (3) गोपुच्छाकृति

नाट्यशास्त्र के टीकाकार

- दसवीं शताब्दी के विद्वान कश्मीर के निवासी संगीत के महान आचार्य अभिनवगुप्त ही इस ग्रंथ के टीकाकार हैं। इनकी टीका अभिनव भारती आज भी उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त कीर्टधर, उद्भट, लोलट, शंकुक के नाम भी उल्लेखनीय है परंतु इनकी टीकाएं उपलब्ध नहीं है।

ग्रंथ का विशिष्ट स्थान

- **भरत** का नाट्यशास्त्र संगीत नाट्य सामग्री का प्रधान स्रोत है भारतीय संगीत अनेकानेक रूप में इसी ग्रंथ से पुष्पित-पल्लवित हुआ। संगीत कला को शास्त्रीय प्रतिष्ठा देकर संगीत के इतिहास में नए युग के सूत्रपात का श्रेय इसी ग्रंथ को है।